डॉ० प्रियंका कुमारी, दर्शनशास्त्र विभाग (भारतीय तत्त्वमीमांसा), P.G SEM-I, C.C. II

* न्याय - प्रमाण विचार एवं तत्त्वविचार पूरा ।

- प्रतिपादक - महर्षि गौतम मुनि या अक्षपाद (प्राचीन न्याय के) न्याय-सूत्र के रचयिता " " "
- न्याय का अर्थ है - प्रमाणों द्वारा तत्त्व परीक्षण ।
- गौतम के न्याय सूत्र पर वात्स्यायन का न्यायभाष्य है ।
- न्यायकुसुमाञ्जलि और आत्मतत्त्वविवेक - उदयन
- न्यायमञ्जरी - जयन्त भट्ट
- नव्यन्याय का प्रवर्तक - आचार्य गंगेश उपाध्याय
- तत्त्वचिन्तामणि के रचयिता " " "
- प्राचीन न्याय में तत्त्वशास्त्र पर अधिक और दिया गया है ।
- नव्य न्याय में तर्कशास्त्र " " " " " "
- वैशेषिक तत्त्वमीमांसा प्रधान है, न्याय में तर्कशास्त्र और ज्ञानमीमांसा का प्राधान्य है।
- वैशेषिक सात पदार्थों को मानता है तथा समस्त वस्तुओं का इन्हीं सात में वर्गीकरण करता है, किन्तु
- न्याय सोलह पदार्थों को स्वीकार करता है और वैशेषिक के सातों पदार्थों का अन्तर्भाव अपने प्रमेय नामक द्वितीय पद में कर देता है।
- वैशेषिक केवल दो प्रमाणों को स्वीकार करता है, - प्रत्यक्ष और अनुमान, तथा शब्द और उपमान को अनुमान के अन्तर्गत मानता है।
- न्याय चार प्रमाण - प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द और उपमान को मानता है।
- न्याय बहिर्वस्तुवाद है।
- न्याय के अनुसार ज्ञान ज्ञाता और ज्ञेय का सम्बन्ध है। बिना ज्ञाता और ज्ञेय के ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता ।
- आत्मा या ज्ञाता ज्ञान का आश्रय है। ज्ञान आत्मा का आगन्तुक धर्म है। ज्ञान का कार्य ज्ञेय पदार्थों को प्रकाशित करना है।
- बिना ज्ञेय पदार्थों का ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता है। वस्तुतः
- ज्ञान के दो भेद - प्रमा (यथार्थ ज्ञान) और अप्रमा (अयथार्थ ज्ञान)
- प्रमा चार है - प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द और उपमान
- अप्रमा तीन है - संशय, विपर्यय और तर्क
- न्याय परतः प्रामाण्यवाद को मानता है। इसके अनुसार पहले ज्ञान उत्पन्न होता है। तदनन्तर ज्ञान में प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य दोनों बाहर से आते हैं (परतः)।

- न्याय-प्रामाण्य और अप्रामाण्य दोनों परतः है, (अन्य से आते है)
- न्याय के ग्रुप विधा को आन्वीक्षिकी कहा जाता है।
- प्रत्यक्ष दो प्रकार के होते है- निर्विकल्प और सविकल्प
- निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ज्ञान की पूर्वावस्था है, जिसमें नाम, जाति, संज्ञा आदि विशेषण विशेष्यसम्बन्ध का ज्ञान नहीं होता।
- सविकल्पक प्रत्यक्ष में नामजात्यादि विशेषण विशेष्यसम्बन्ध का ज्ञान होता है।
- प्रत्यक्षज्ञान का जनक इन्द्रियार्थसन्निकर्ष छः प्रकार के होते हैं:—

1. संयोग- जब इन्द्रिय और वस्तु के बीच साक्षात (बिना किसी माध्यम के) सन्निकर्ष होता है।
2. संयुक्त समवाय- संयुक्त समवाय में इन्द्रिय का सीधा संबंध वस्तु के साथ न होकर एक माध्यम के द्वारा होता है। जैसे- घड़े की लालिमा का ज्ञान।
3. संयुक्त समवेत समवाय- इसमें इन्द्रिय का वस्तु के साथ सम्बन्ध दो माध्यमों के सहारे होता है।
4. समवाय- चौथे प्रकार के सन्निकर्ष को समवाय कहा जाता है। इसमें इन्द्रियों का सन्निकर्ष एक ऐसी वस्तु से होता है जिसमें वस्तु एक गुण के रूप में इन्द्रिय में समवेत रहता है। इसका उदाहरण है- कर्णेन्द्रिय के द्वारा शब्द का प्रत्यक्ष होता।
5. समवेत समवाय- शब्द में उसकी जाति समवेत रहता है। ज्योंहि हम कोई शब्द सुनते है त्योंही यह जाति (शब्दत्व) की प्रत्यक्ष होता है।
6. विशेष्य विशेषण-भाव- जब हम किसी वस्तु के अभाव का प्रत्यक्ष करते है तब स्वतः अभाव नहीं दिखाई देते तो प्रत्यक्ष के साथ मिला हुआ कोई न कोई आधार दिखाई देता है। घड़ा नहीं है ~~अभाव~~ ज्ञान के ~~लिये~~ लिये यह जानना पड़ता है कि भूतल पर घड़े का अभाव है।

* प्रत्यक्ष
- लौकिक
  - बाह्य प्र. (5)
  - मानस प्र. (1)
- अलौकिक
  - सामान्यलक्षण
  - ज्ञानलक्षण
  - योगज